अध्याय दूसरा

प्रबंध काव्य का स्वरूप एवं "भूमिजा"

अध्याय दूसरा

प्रबंध काव्य का स्वरूप एवं "भूमिजा"

प्रबंध काव्य का स्वरूप :-

प्रस्तुत अध्याय में प्रबंध काव्य के स्वरूप-संबंधी विचार विमर्श करने से पहले हमें हिंदी साहित्य मे काव्य के वर्गीकरण के बारे में थोडी बहुत जानकारी प्राप्त करना जरूरी है। इसी वर्गीकरण की बदौलत हमें प्रबंध काव्य संबंधी अधिक संतुलित जानकारी मिल सकती है।

अ· हिंदी में काव्य का वर्गीकरण :-

हिंदी साहित्य के आचार्यो ने काव्य का वर्गीकरण किया है, परंतु उनके काव्य वर्गीकरण पर संस्कृत और पाश्चात्य आचार्यो के वर्गीकरण का प्रभाव स्पष्ट है। इसीलिए हिन्दी साहित्य में स्वतंत्र रूप से काव्य रूपों को वर्गबध्द करनेवालों का अभाव सा दिखाई देता है। डा·शामसुंदरदा ने काव्य के दो भेद किए है।

1· व्यक्ति प्रधान 2· विषय प्रधान [1]

काव्य आत्मा की अभिव्यक्ति है। व्यक्ति की अनुभूति की अभिव्यकित के आधारपर तो हम इनके व्यक्तित्व प्रधान काव्य के वर्गीकरण को मान सकते परंतु "विषयप्रधान वर्गीकरण" संभ्रम निर्माण करता हे, क्योंकि विषय प्रधान काव्य

में भी आत्माभिव्यंजना होती है। बाबू गुलाबराय ने काव्य का वर्गीकरण इस प्रकार किया है - [2]

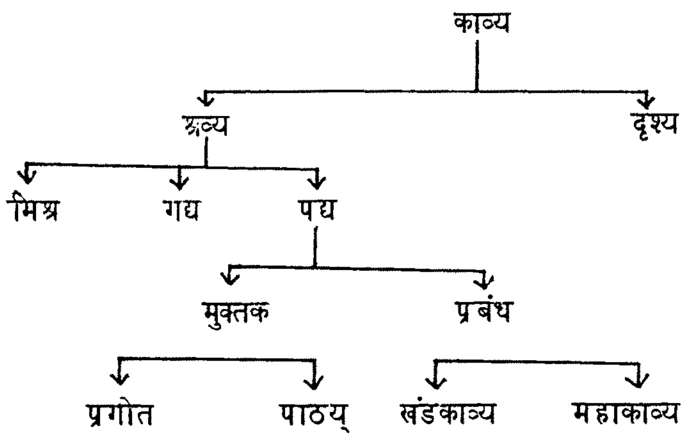

बाबूजी का यह वर्गीकरण अधिक संतुलित है।

आचार्य विश्वनाथप्रसाद मिश्र ने काव्य का वर्गीकरण शैली, बंध और अर्थ के आधारपर किया है।[3] परंतु इन तीनों को काव्य विभाजन का अलग-अलग आधार मानना युक्तिसंगत नहीं है।

आचार्य विश्वनाथप्रसाद मिश्र का वर्गीकरण इस प्रकार है -

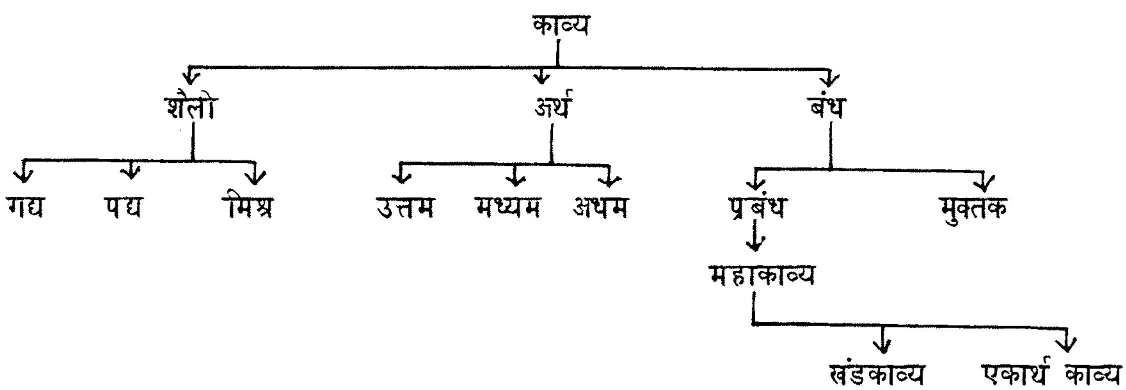

आचार्य डा॰भगीरथ मिश्र ने साहित्य का वर्गीकरण किया है। साहित्य, वाड्मय का पर्याय है। इसमे मुक्तक का पुनर्वर्गीकरण मौलिक है।[4]

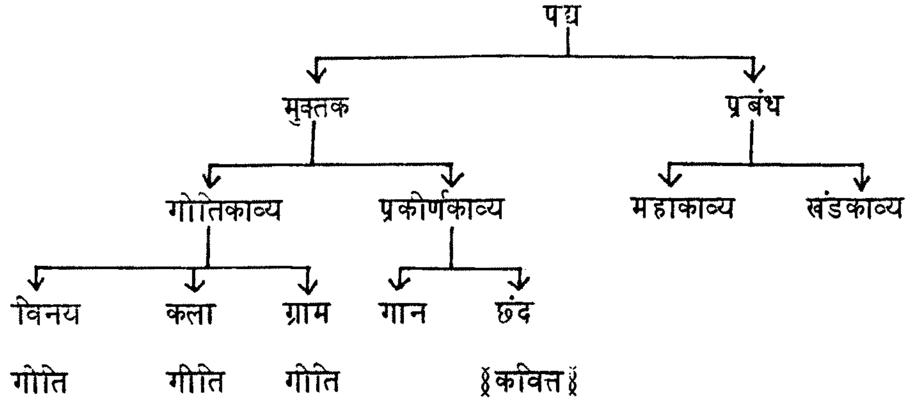

डा·भगीरथ मिश्र ने "काव्यशास्त्र" मे काव्य का वर्गीकरण निम्नानुसार किया है।[5]

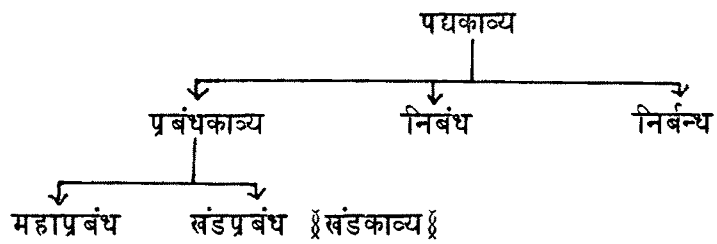

प्रबंध काव्य :-

विद्वानों ने प्रबंध काव्य से महाकाव्य का अर्थबोध किया है। आचार्य प्रो·रामचंद्र शुक्ल ने "जायसी ग्रंथावली" की भूमिका में "प्रबंधकाव्य" शब्द का प्रयोग "महाकाव्य" के लिए ही किया है। उन्होंने प्रबंध काव्य में मानव जीवन का पूर्ण दृश्य माना है।[6]

प्रबंध काव्य वह प्रबंध रचना है, जिसके छंद कथासूत्र की व्यवस्था से पिरोए रहते है। उसके छंदो के क्रम को बदला नहीं जा सकता है। प्रबंधकाव्य, महाकाव्य और खंडकाव्य के बीच का भी हो सकता है। प्रबंध रचना को कुन्तक ने कवियों के यश का मुल माना है[7] और पाश्चात्य साहित्य में प्रबंध को वस्तुगत काव्य के अन्तर्गत स्थान दिया है।[8] हिंदी साहित्यकोश में भी प्रबंध काव्य को महाकाव्य कहा गया है।[9]

प्रबंध काव्य के उप-भेद :-

प्रबंध काव्य में वस्तुसंगठन कथानक के द्वारा किया जाता है। कहीं कहीं महापुरूष के जीवन की झाँकी और उससे संबंधित घटना वर्णित करना ही कवि का उद्देश्य होता है और कहीं कहीं पूर्ण जीवन का व्यापक चित्रण मिलता है। इस दृष्टि से प्रबंध काव्य को दो रूपों में देखा जा सकता है -

1. महाप्रबंध या महाकाव्य।
2. खंडप्रबंध या खंडकाव्य।

महाप्रबंध या महाकाव्य :-

महाप्रबंध में पूर्णता के साथ जीवन के विविध अंगो और घटनाओं का विशद वर्णन व्यापकता तथा सजीवता के साथ किया जाता है। इसी कारणवश महाप्रबंध में नायक के उत्कृष्ट और उदात्त चित्रण का होना आवश्यक है।

डा. भगीरथ मिश्र के अनुसार महाप्रबंध के तीन रूप किए जा सकते है -

अ. पुराण ब. आख्यान क. चरितकाव्य

1. **पुराण :-**

पुराण अत्यंत विस्तृत महाप्रबंध है। इसमें अनेक स्कंध होते है और एक-एक स्कंध में अनेक अध्याय रहते है। फलतः इसमें कथा-उपकथाओं का सागर होता है।

2. **आख्यान :-**

आख्यान विस्तृत महाप्रबंध है। जिसमें प्रेम, नीति, भक्ति, वीरता आदि के निरूपण के लिए काल्पनिक रोचक कथानक का सरस, मधुर शैली में वर्णन होता है। इसके अन्तर्गत भी विभिन्न प्रसंग या खंड हो सकते है। इसमें एक

प्रधान या प्रमुख कथा और अन्य कुछ गौण कथाएँ संगठित होती है। इसमें प्रेमाख्यानक, नीताख्यानक और साहित्यिक आख्यानक आदि कई भेद हो सकते है।

3. **चरितकाव्य :-**

यह एक प्रकार का वर्णनात्मक प्रबंध है। इसमें रोचक काव्य शैली में किसी व्यक्ति का विशेष रूप से वीर या किसी लोकमान्य महापुरूष का घटनाक्रम के अनुसार जीवन चरित लिखा जाता है।

महाकाव्य संबंधी विशेषताएँ :-

आकार प्रकार और गरिमा की दृष्टि से महाकाव्य का महत्त्व असाधारण है। अग्निपुराण में उसको अधोलिखित विशेषताओं का वर्णन मिलता है..[10]

1. महाकाव्य सर्गबन्ध रचना है। ये सर्ग वृत्तांतवाले एवं विस्तृत होते है।
2. इसका कथानक इतिहासप्रसिध्द अथवा किसी महात्मा, सज्जन, सज्जन व्यक्ति के वास्तविक जीवन पर आश्रित होता है।
3. इसमें शक्वरी, अतिशक्वरी, जगती, अतिजगती, त्रिष्टुप, जातिवाले, पुष्पिताग्रादि छन्दों का प्रयोग होता है।
4. महाकाव्य में नगर, वन, पर्वत, चंद्र, सूर्य, आश्रम, वृक्ष, उपवन, जल क्रिडा, मधुपान, उत्सव आदि के वर्णन होते हैं तथा इसमें समस्त रीतियों, वृत्तियों और रसों का समावेश होता है।
5. उक्तिवैचित्र्य को प्रधानता होने पर भी महाकाव्य में प्राण के रूप में रस ही व्याप्त रहता है।
6. इसमें विश्वविख्यात नायक के नाम पर धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष चतुर्वर्ग की प्राप्ति दिखाई जाती है।
7. महाकाव्य का आरंभ संस्कृत के किया जाता है। इसमें तद्भव और तत्सम प्राकृतों का प्रयोग नही होना चाहिए।

दंडो ने महाकाव्य को लगभग यही विशेषताएँ बताई है।[11] परंतु उनके विवेचन में बहुत सो नवोन और महाकाव्य भो अधिक व्यापक धारणा को स्पष्ट करनेवालो विशेषताएँ भी सम्मिलित हो गई हैं। उनके मतानुसार -

1· महाकाव्य सर्गबन्ध रचना है, जिसमे अनतिविस्तुत सर्गो में, कथा का सुसंगठन संधि आदि के द्वारा होता है।

2· कथावृत्त इतिहास अथवा किसी सज्जन के सच्चे (कल्पित नहीं) जीवनपर आश्रित रहता है।

3· इसमें नगर, पर्वत, चंद्र, सूर्योदय, उपवन, जलक्रिडा, मधुपान से युक्त उत्सवों आदि का वर्णन होता है।

4· उदात्त गुणों से युक्त चतुर नायक की चतुवर्ग की प्राप्ती का वर्णन होता है।

दंडो ने महाकाव्य के लक्षणों में निम्नांकित विशेषताएँ अग्निपुराण से ली है -

1· प्रारंभ में आशोर्वचन, स्तुति या कथावस्तु का संकेत होना चाहिए।

2· महाकाव्य को विविध वृत्तान्तो से युक्त लोकरंजक होना चाहिए।

3· उसमें प्रस्तुत काव्य कई युगों और अनेक कालों तक अमर होना चाहिए।

उपर्युक्त विशेषताएँ महाकाव्य के उच्च गौरव, उसके सामाजिक मूल्य और व्यापक प्रभाव को स्पष्ट करनेवाली है। महाकाव्य में कल्पित वृत्तान्तों का निषेध है।[12]

सुप्रसिध्द जैन विद्वान आचार्य हेमचंद्र ने अपने ग्रंथ "काव्यानुशासन" में महाकाव्य का अत्यंत संक्षेप में लक्षण लिखते हुए यह कहलाया है कि - "महाकाव्य में छंद, सर्गबध्दता, संधिसंगठन, अलंकार, उक्तिवैचित्र्य, वर्णन और भावरसादि विशेषताएँ होनी चाहिए।[13]

इसतरह से प्रबंध काव्य के अन्तर्गत महाकाव्य को अग्रक्रम प्राप्त है। उसके उपरान्त खंडकाव्य का स्थान आता है।

खंडप्रबंध या खंडकाव्य :-

प्रबंधकाव्य का दुसरा प्रमुख भेद खंडकाव्य है। खंडकाव्य प्रबंध काव्य का ही एक विशेष रूप है। संस्कृत में पूर्ववर्ती अलंकारियों ने प्रबंध काव्य शब्द का प्रयोग अधिक न करके प्रायः "सर्गबन्ध" या "सर्गबन्ध काव्य" शब्द का ही प्रयोग किया है। क्योंकि प्रबंध के भीतर वे सर्गबन्ध काव्य के अतिरिक्त रूपक, कथा, आख्यायिका आदि सभी प्रबंधात्मक साहित्यरूपों को ग्रहण करते थे। भामह और दंडी ने सर्गबन्धकाव्य का अर्थ विशेष रूप से महाकाव्य ही लिया है। पर उन्होंने खंडकाव्य की चर्चा नहीं की है।14

रूद्रट ने सभी प्रबंधो (प्रबंध काव्य, कथा, आख्यायिका आदि) को महत् और लघु इन दो प्रकारों में विभक्त कर उनका अन्तर इस प्रकार बताया है -

"तम महन्तो येषु च वितस्तेज्वमिधियते
चतुर्वर्गः सर्वे रसः क्रियन्ते काव्यस्थाननि
सर्वाणि ते लघवो विज्ञेया येण्वन्यतमो
भवेच्यतुर्वर्गात् असम ग्रानेकरसा ये च
समग्रेकरयुक्ता।"15

इस तरह सर्वप्रथम रूद्रट ने प्रबंधकाव्यों के दो रूपों पर (महाकाव्य और खंडकाव्य) मौलिक ढंग से विचार किया है। उसने इसे "लघुकाव्य" कहा है।16 क्योंकि यह लघु होता है। खंडकाव्य का "खंडप्रबंध"17 नामकरण डा·भगीरथजी मिश्र ने किया है।

खंडकाव्य की विभिन्न आचार्योद्वारा दी गई परिभाषाएँ :-

संस्कृत में साहित्यदर्पण में आचार्य विश्वनाथ ने खंडकाव्य की परिभाषा इस तरह से की है -

"भाषा विभाषा नियमात्कायं सर्ग समुत्थितम्।
एकार्थ प्रवणेः पद्यैः सन्धि सामग्रह्यवर्जितम्। ।।328।।
खंडकाव्यम् भवेत्काव्यस्यै के दशातु सारेच।"[18]

उन्होंने काव्य के एक देश एक अंश का अनुसरण करनेवाले लघुप्रबंधकाव्य को खंडकाव्य कहा है। भाषा विभाषा में रचित, सर्गबध्द, समस्त संधियों से रहित एक कथा के निरूपक पद्य काव्य को उन्होंने काव्य की अभिधा दी और उसके एक देश का अनुसरण करनेवाले काव्य को "खंडकाव्य" कहा है।

विश्वनाथ ने वाड्मय विमर्श में खंडकाव्य की परिभाषा लिखते हुए कहा है कि -

"महाकाव्य के ढंगपर जिस काव्य की रचना होती है, पर जिसमें पूर्ण जीवन न ग्रहण करके खंडजीवन ही ग्रहण किया जाता है उसे खंडकाव्य कहते है। खंडकाव्य में खंडजीवन इस प्रकार व्यक्त किया जाता है, जिससे वह प्रस्तुत रचना के रूप में स्वतः पूर्ण प्रतीत होता है।[19]

"साहित्यदर्पण" के अनुसार "एकदेशानुसारी काव्य खंडकाव्य होता है।" इस कथन के आधारपर आधुनिक लेखकों ने खंडकाव्य के लक्षण देने का प्रयास किया है।

बाबू गुलाबराय ने अपने "काव्य के रूप" ग्रंथ में खंडकाव्य की परिभाषा देते हुए लिखा है कि, "खंडकाव्य में एक ही घटना को मुख्यता दी जाकर उसमें जीवन के किसी एक पहलू की झाँकी-सी मिल जाती है।"[20]

आचार्य डा·भगीरथ मिश्र ने खंडकाव्य खंडकाव्य की परिभाषा "हिंदी काव्यशास्त्र का इतिहास" में निम्नानुसार दी है ।

"खंडकाव्य वह प्रबंध काव्य है, जिसमें किसी भी पुरूष के जीवन का कोई अंश ही वर्णित होता है, पूरी जीवन गाथा नहीं। इसमें महाकाव्य के सभी अंग न रहकर एकाध अंग ही रहता है।"[21]

डा·मिश्रजी ने अपने "काव्यशास्त्र" में खंडकाव्य के लक्षण दिए हैं- "खंडकाव्य में कथावस्तु संपूर्ण न होकर उसका एक अंश ही होता है। प्रायः जीवन की एक महत्त्वपूर्ण घटना या दृश्य का मार्मिक उद्घाटन होता है, अन्य प्रसंग संक्षेप में रहते है।"[22]

डा·हरदेव बाहरी ने "हिंदी की काव्यशैलियों का विकास" में खंडकाव्य की परिभाषा दी है कि, "खंडकाव्य में एक ही घटना होती है, और उसमें मानव जीवन के एक ही पहलू पर प्रकाश डाला जाता है। उसमें महाकाव्य के अन्य गुण पूर्णतया विद्यमान रहते है।"[23]

राजेंद्र द्विवेदी के मत से - "महाकाव्य के एक अंश का अनुसरण करनेवाला काव्य, महाकाव्य के लिए आवश्यक वस्तुओं में से, जिसमें सबका समावेश न हो और भी अपेक्षतया छोटे जीवन क्षेत्र का प्रबंध चित्र उपस्थित करे, खंडकाव्य है।"[24]

डा·शकुंतला दुबे ने लिखा है, कि "उसमें (खंडकाव्य में) प्रासंगिक कथाओं का अभाव ही होता है। उसकी कथा सर्गो में गुंथी जा सकती है, और उसके बिना भी उसका प्रणयन हो सकता है।"[25]

हिंदी साहित्यकोश में खंडकाव्य के बारे में कहा गया है कि, "मोटे ढंग से यह कहा जा सकता है कि खंडकाव्य एक ऐसा पद्यबध्द कथा काव्य है जिसके कथानक में इस प्रकार की एकात्मक आन्विति हो कि उसमें अप्रासंगिक कथाएँ, सामान्यतया अंतर्भूत न हो सके, कथा में एकांगिता हो तथा कथाविन्यास क्षेत्र

में क्रम, आरंभ, विकास, चरमसीमा और निश्चित उद्देश्य में परिणति हो।"[26]

डा·सरनामसिंह शर्मा के शब्दों में, "काव्य के एक अंश का अनुसरण करनेवाला खंडकाव्य होता है। उससे जीवन की पूर्णतः अभिव्यक्ति नहीं होती। उसकी रचना के लिए कोई एक घटना अथवा संवेदना मात्र पर्याप्त होती है।"[27]

खंडकाव्य की उपलब्ध परिभाषाओ को ध्यान में रखते हुए खंडकाव्यों के जो आधुनिक लक्षण बताये गए है, उनमें अभावात्मक लक्षणों की ही प्रधानता है, परंतु इसका तात्पर्य यह नहीं है कि जो महाकाव्य के लक्षणों पर खरा नहीं उतरता, वह अनिवार्यतः खंडकाव्य होता ही है।

डा·बलदेव उपाध्याय,[28] डॉ·धीरेंद्र वर्मा[29] आदि विद्वानों ने भी खंडकाव्य की परिभाषाएँ दी है परंतु असफल महाकाव्य या लघु आकार के किसी एक घटनाप्रसंग पर आधारित लीलाकाव्य या चरितकाव्य मात्र को खंडकाव्य की संज्ञा देना समीचीन नहीं है। खंडकाव्य की स्वतंत्र और निश्चयात्मक विशेषताओ का निरूपण संभव हे, परंतु इनके लिए इसके नाम से अभिहित समस्त रचनाओं का विवेचन, विश्लेषण आवश्यक होगा। मोटे तौर पर यह कहा जा सकता है कि खंडकाव्य एक ऐसा पद्यबध्द काव्य है, जिसके कथानक में इस प्रकार की एकात्मक आन्विति हो कि उसमें प्रासंगिक कथाएँ सामान्यतया अंतर्भुत न हों। कथाओं में एकांगिता हो तथा कथाविन्यास, आरंभ, विकास, चरमसीमा और निश्चित उद्देश्य में परिणति हो। कथा की एकांगिता के परिणामस्वरूप खंडकाव्य के आकार में लघुता स्वाभाविक है। साथ ही उसमें उद्देश्य की महाकाव्य जैसी महनीयता भी संभव नहीं है। कथा की एकांगिता के ही कारण खंडकाव्य में गीतिकाव्य के अनेक लक्षण स्वतः आ जाता है। ये खंडकाव्य महाकाव्य का वैविध्य न रखनेवाले लघु प्रबंधकाव्य है और ये जीवन के किसी एक अंग को लेकर लिखे जाते है। सभी विद्वानों की खंडकाव्य-विषयक परिभाषाएँ देखकर खंडकाव्य के बारे में हमारी यही धारणा होती है कि, "खंडकाव्य में नायक के जीवन की पूर्णतः अभिव्यक्ति न होकर किसी एक ही

घटनापर प्रकाश डाला जाता है, इसमें अप्रासंगिक कथाओं का समावेश नहीं होता। परंतु कथा संगठन अवश्य रहता है। उसमें सर्गबध्दता अनिवार्य न होकर चतुर्वर्ग फल में से किसी एक ही फल की प्राप्ति ही उद्देश्य होता है।

कथानक की दृष्टि से खंडकाव्य के लक्षण :-

1· खंडकाव्य विषयप्रधान होता है।

2· खंडकाव्य का फलक ≬कैन्वस≬ विस्तृत नहीं होता।[30]

3· संस्कृत अलंकारवादियों के मतानुसार खंडकाव्य प्रायः सर्गो में विभक्त नहीं होते। अर्थात खंडकाव्य के लिए सर्गबध्दता अनिवार्य नहीं है।

4· कथाविन्यास में नाटकीयता, खंडकाव्य के आकर्षण को बढाती है।

5· खंडकाव्य में वर्णन विस्तार नहीं हो सकता। उसकी विषयवस्तु भावात्मक अधिक होती है।

6· खंडकाव्य के कथानक का विकास बहुत कुछ भावविकास पर आधारित है। इसी कारण खंडकाव्य का कथानक पौराणिक, ऐतिहासिक, कल्पित, प्रतीकात्मक, चरितकाव्य आदि प्रकार का हो सकता है।

7· कथानक के बीच-बीच में गीतों का प्रयोग खंडकाव्य की एक विशेषता है।

8· खंडकाव्य में कथा संगठन आवश्यक है। कथाविन्यास में - क्रम, आरंभ, विकास, चरमसीमा और निश्चित उद्देश्य अपेक्षित है।

9· खंडकाव्य में प्रासंगिक कथांओ का अभाव होता है।

10· खंडकाव्य की कथा लोकविख्यात अथवा इतिहास-प्रसिध्द होना अनिवार्य नहीं है।

11· खंडकाव्य अपने छोटे आकार में ही पूर्ण होता है। इसका नाम "खंडकाव्य" है इस आधारपर इसे किसी अन्य काव्यरूपों का खंड नहीं समझना चाहिए।

12· खंडकाव्य में जिस अनुभूति की अभिव्यक्ति होती है, वह खंडित न होकर पूर्ण होती है।

13· खंडकाव्य की कथावस्तु संपूर्ण न होकर उसका एक अंश होती है। अतः उसमें जीवन की एक घटना वर्णित होती है।

ख· **पात्र की दृष्टि से खंडकाव्य के लक्षण :-**

1· खंडकाव्य में सुर, असुर, मनुष्य, इतिहास प्रसिध्द अथवा कल्पित व्यक्ति या शांत, ललित, उदात्त और उद्धत में से किसी भी प्रकार का नायक हो सकता है।

2· खंडकाव्य में नायक के जीवन की एक ही घटना का वर्णन होता है और वह उसके जीवन के किसी एक ही पक्ष की झलक प्रस्तुत करता है।

3· खंडकाव्य में उच्चकुलोत्पन, क्षात्रिय अधिपति की आवश्यकत नहीं होती। उसका काम किसी भी प्रकार के नायक से चल सकता है।[31]

ग· **देशकाल वातावरण की दृष्टि से खंडकाव्य के लक्षण :-**

1· खंडकाव्य में महाकाव्य की भाँति युग को कोई महत संदेश नहीं दिया जाता। अधिक से अधिक उसमें व्यक्ति समाज को कोई उपदेश दिया जा सकता है।

घ· **शैली की दृष्टि से खंडकाव्य के लक्षण :-**

शैली कवि से व्यक्तित्त्व की अभिव्यक्ति का माध्यम है। काव्य में वस्तु की ही भाँति शैली भी मूल्यवान होनी चाहिए। खंडकाव्य की भाषा शैली प्रसंग के अनुकूल और कवित्त्वपूर्ण होनी चाहिए। भावों के व्यक्त होने पर रचना का जो रूप स्थित होता है, उसे शैली कह सकते है। शैली की रोचकता और वस्तु सौंदर्य से रचना में आकर्षण पैदा होता है। खंडकाव्य की रचना भाषा या विभाषा में हो सकती है। इस तरह से किसी सीमा तक अल्पाकार होकर भी खंडकाव्य महाकाव्य के गुणों से शून्य नहीं होता।

खंडकाव्य का उद्देश्य :-

भारतीय परंपरा के अनुसार चतुर्वग की प्राप्ति मानव जीवन का चरम उद्दिष्ट है, अतः चतुर्वर्ग फलों में से किसी एक फल की प्राप्ति ही खंडकाव्य का उद्देश्य होता है।[32] अर्थात धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष में से एक की प्राप्ति का संकेत और उसका निरूपण खंडकाव्य में अवश्य होना चाहिए।

खंडकाव्य में रस :-

आचार्य विश्वनाथप्रसाद ने रस को काव्य की आत्मा कहा है। अतः खंडकाव्य रसपूर्ण होना आवश्यक है। उसमें एक रस समग्र रूप में अथवा अनेक रस असमग्र रूप में होते हैं। सामान्यतः रसनिष्पत्ति की दृष्टि से खंडकाव्य सफल होना आवश्यक है।

खंडकाव्य में छंद :-

खंडकाव्य की कथा कभी एक छंद में तो कभी (अनेक) विविध छंदो में लिखी जाती है। कथा की लघुता के कारण खंडकाव्य में महाकाव्य की तरह सर्गांत में छंद परिवर्तन अथवा आगे आनेवाली कथा की सूचना नहीं दी जाती। इसी तरह से उसमें सभी संधियाँ नहीं होती।

खंडकाव्य में अलंकार :-

खंडकाव्य में अलंकारो की विविधता अपेक्षित है, क्योंकि अलंकारो से खंडकाव्य की काव्यसुषमा वृद्धिंगत होती है और उसमें सरसता तथा प्रभाविष्णुता आविर्भूत होती है।

खंडकाव्य की सैद्धान्तिक विशेषताएँ :-

क. **खंडकाव्य और महाकाव्य की समता-विषमता :-**

खंडकाव्य और महाकाव्य दोनों प्रबंध-काव्य के ही भेद है। खंडकाव्य-छोटा अथवा खंडरूप होता है, इसीलिए उसे खंडकाव्य कहते है। महाकाव्य का

आकार बडा होता, इसीलिए उसे महाकाव्य कहते है। उसका यह नामकरण आकार-जनित है। महाकाव्य में महत उद्देश्य, महत् चरित्र और समग्र युग जीवन का चित्रण होता है तथा उसमें गरिमामयी और उदात्त शैली अपेक्षित है। खंडकाव्य में जीवन का खंड दृश्य चित्रित होता है। अतः वह कथा की लघुता और उद्देश्य की सीमाओं के कारण बृहदाकार तथा महान नहीं बन पाता। खंडकाव्य में नायक के जीवन की किसी एक ही घटना का वर्णन होता है। इसलिए उसमें जीवन के किसी एक ही पक्ष की झाँकी मिलती है।

महाकाव्य में नायक के जीवन का इतना भाग चित्रित होता है कि उससे समग्र युग जीवन की अभिव्यक्ति हो सके। परंतु खंडकाव्य में यह संभव नहीं होता। दूसरे शब्दों में खंडकाव्य का लक्ष्य व्यक्ति है, तो महाकाव्य संपूर्ण जाति को समेटकर चलता है। महाकाव्य की कथा सर्गो में विभाजित होना आवश्यक है, परंतु खंडकाव्य में सर्गबध्दता अनिवार्य नहीं है।

खंडकाव्य की कथा छोटी होती है और उसमें कथा संगठन लाया जा सकता है।[33] किंतु महाकाव्य की कथा बडी होती है। उसमें मुख्य कथा बडी होती है। उसमें मुख्य कथा के साथ-साथ अवांतर कथाओं का भी समावेश हो सकता है। उस आधारपर जिस काव्य में कथा जीवन के विस्तृत क्षेत्र से न चुनकर उसके किसी सीमित भाग से ली जाती है। वह खंडकाव्य है। अर्थात खंडकाव्य में कोई लघुकथा-घटना पद्यबध्द की जाती है, किंतु द्रष्टव्य है कि महाकाव्य के किसी अंश को खंडकाव्य नहीं कहा जा सकता। हाँ खंडकाव्य महाकाव्य के बडे कथानक से कथा भाग लेकर स्वतंत्र रूप लिखा जा सकता है। यह स्वतः पूर्ण होता है।

वैयक्तिक जीवन के विविध पक्षों के साथ युग जीवन की वैविध्यपूर्ण चेष्टाएँ महाकाव्य में आकलित होती है। उसकी रचना सर्गबध्द होती है। प्रत्येक सर्ग में जीवन का एक पक्ष वर्णित होता है। सभी सर्ग तारतम्यक रूप से एक विशिष्ट गरिमायुक्त भावना से निबध्दित रहते है। उसका नायक किसी जाति

या राष्ट्र की सामूहिक चेतना का संवाहक होता है। संतुलित कथानक, सुस्पष्ट चरित्र-विन्यास, प्रशस्त और जीवन्त जीवन संदेश के अतिरिक्त शैली भी औदात्यपूर्ण होती है। भाषा और छंद का सुष्ठु प्रयोग, वर्णन का चारूत्व क्रमशः उसे आकर्षक एवं ओजस्वी बनाने में सहायक होते है। पर ये सभी बातें खंडकाव्य में खोजना उचित नहीं है, क्योंकि खंड में नायक का पूर्ण जीवन न ग्रहण कर उसका खंडजीवन ग्रहण किया जाता है। अर्थात खंडकाव्य में जीवनवृत्त तो ग्रहण किया जाता है, परंतु उसमें महाकाव्य की तरह अधिक विस्तार नहीं होता बल्कि उसमें कथा का कोई उद्दिष्ट पक्ष, प्रबल होता है।[34]

महाकाव्य की कथा बृहदाकार होती है और बृहदाकार कथा के संयोजन एवं संगठन के लिए महाकाव्य मे पंचसंधियो का विधान[35] एक सर्ग में एक ही छंद,[36] सर्गान्त में छंद परिवर्तन,[35] तथा सर्ग के अन्त में आगामी कथा की सूचना देना[38] अनिवार्य रहता है। खंडकाव्य में सभी संधियाँ अपेक्षित नहीं है। खंडकाव्य की कथा एक ही छंद में लिखी जाती है और उसे विविध छंदो में भी लिखने के लिए कवि स्वतंत्र रहता है। महाकाव्य में प्रकृति का सांगोपांग चित्रण और लोक रीतियों का विस्तृत वर्णन होता है पर खंडकाव्यों में इनमे से प्रकृति का वर्णन ही अधिकांशतः अल्पाकार में देखनेके लिए मिलता है।

ख. **खंडकाव्य और एकार्थकाव्य :-**

जिनमें किसी व्यक्ति के संपूर्ण जीवन का चित्रण नहीं होता और महाकाव्य के अन्य सभी गुण पाये जाते है, उन्हे प्रायः एकार्थ काव्य कहा जाता है।

खंडकाव्य और एकार्थ काव्य में सबसे पहला साम्य यह है कि जिस तरह खंड की रचना भाषा या विभाषा में की जाती है, उसी तरह एकार्थ काव्य की रचना भी भाषा या विभाषा में की जाती है।

एकार्थकाव्य की रचना सर्गबद्ध होती है, परंतु खंडकाव्य की रचना सर्गबद्ध होना आवश्यक नहीं है।

खंडकाव्य और एकार्थकाव्य दोनों मे सभी पंचसंधियाँ नहीं होती। एकार्थ काव्य का उद्देश्य कोई एक अर्थ अथवा प्रयोजन की सिध्दी होता है, किंतु खंडकाव्य का उद्देश्य चतुर्वर्ग को फलप्राप्ति में से किसी एक वर्ग की फलप्राप्ति होता है। खंडकाव्य में नायक का खंडजीवन ही अंकित होता है, किंतु एकार्थकाव्य में नायक का विस्तृत जीवन भी अपने व्यापक रूप में चित्रित हो सकता है। इसमें भी नायक का एक लक्ष्य साधना में लगा हुआ उसका जीवनांश होता है।

आचार्य विश्वनाथप्रसाद मिश्र ने "वाड्मय विमर्श" में प्रबंध काव्य के तीन भेद (महाकाव्य, एकार्थकाव्य और खंडकाव्य) किए है। उनके अनुसार महाकाव्य और खंडकाव्य के बीच की कडी एकार्थकाव्य है जो अंतर महाकाव्यात्मक उपन्यास, सामान्य और कहानी में है लगभग वैसा ही अन्तर महाकाव्य, एकार्थकाव्य और खंडकाव्य में है।

ग. **खंडकाव्य और चरितकाव्य :-**

चरितकाव्य जीवन के अत्यंत निकट है। अतः उसका यथार्थ होना आवश्यक है। खंडकाव्य की कथा यथार्थ होना आवश्यक नहीं है। खंडकाव्य में नायक के जीवन की एक घटना का वर्णन होता है, परंतु चरितकाव्य में नायक के संपूर्ण जीवन का वर्णन अभीसिप्त है। चरितकाव्य में कभी-कभी नायक के जीवनवृत्त के साथ उनकी वंशावली अथवा एक वंशावली विशेष का भी वर्णन होता है। खंडकाव्य चरितकाव्य की अपेक्षा अधिक कलात्मक होता है। खंडकाव्य में अलंकरण, चमत्कार और पांडित्यप्रदर्शन दिखाई देता है, परंतु चरितकाव्य में इनका अंशतः अभाव भी चल जाता है। चरित काव्य की वस्तु योजना इतिवृत्तात्मक, स्फीत और विशृंखल होती है।[39]

इनके विपरीत खंडकाव्य की कथायोजना कहीं अधिक वर्णनात्मक, संगठित एवं शृंखलाबध्द होती है। सुकवि एक छोटी घटना को भी अपनी वर्णनात्मक शैली के सहारे बृहत रूप प्रदान कर खंडकाव्य रच सकता है।

चरितकाव्य का आरंभ वक्ता-श्रोता के रूप में होता है।[40] खंडकाव्य में यह आवश्यक नहीं है। चरितकाव्य में अवांतर कथांओ की समायोजना होती है, परंतु खंडकाव्य में प्रासंगिक कथांओ के लिए कोई स्थान नहीं है। उनसे बचकर रहना ही खंडकाव्य में अच्छा है। चरितकाव्य अन्ततः प्रचारात्मक हो सकता है। पर खंडकाव्य उत्कृष्ट कलाकृति के रूप में जीता है।

ग. **खंडकाव्य और प्रेमाख्यानक काव्य :-**

यदि आख्यानक काव्य का अर्थ हमने कथाकाव्य ले लिया, तो अनुचित नहीं होगा, क्योंकि राम बाबू शर्मा ने सूफी प्रेमाख्यानक काव्य को कथाकाव्य का अवांतर भेद स्वीकारा है।[41]

उद्देश्य की दृष्टि से प्रेमाख्यानक काव्य के सूफी एवं सूफीतर दो भेद है। सूफी प्रेमाख्यानक काव्य प्रतिकात्मक है। वहाँ लौकिक-अलौकिक द्विविध कथा समांतर चलती है। असूफी प्रेमाख्यानों में यह द्विविधता नहीं है। उसमें लौकिक प्रेम-कथा ही उद्दिष्ट होती है।

डा. राजकुमार वर्मा ने प्रेमाख्यानक काव्य को "अलिफ लैला" का रूपांतर तक कहा है। कथा काव्य का एक रूप प्रेमाख्यानक काव्य है।[42] प्रायः कथाकाव्य के सभी लक्षण हमे प्रेमाख्यानकों में देखने के लिए मिलते हैं। स्पष्ट है खंडकाव्य और प्रेमाख्यानक काव्य में अंतर है। खंडकाव्य में कोई न कोई उपदेश अवश्य रहता है। इसीलिए खंडकाव्य के नायक केवल धीर ललित या धीरप्रशांत नहीं बल्कि किसी भी प्रकार के हो सकते है। फिर भी "हिंदी साहित्य कोश" में लिखा है कि मध्यकाल के सारे प्रेमाख्यानक खंडकाव्य है।[43] यह विशुध्द भ्रम है। सर्वविहित है कि जायसी का प्रेमाख्यानक काव्य "पद्मावत" महाकाव्य है। कुतुबन मंझन आदि के प्रेमाख्यान काव्य भी महाकाव्य है।

"भूमिजा" का प्रबंधकाव्य :-

साहित्य के दो प्रमुख भेद उनमें से पद्य अर्थात काव्य सबसे अधिक रोचक होता है। जीवन की बिखरी हुई अनुभूतियों को समेटकर कवि जब उन्हें शब्द और अर्थ के माध्यम से एक कलापूर्ण रूप देता है, तभी काव्य का जन्म होता है। ऐसे पद्य या काव्य के कथानक या - क्रमबध्दता के तीन प्रकार के **भेद विद्वानों** ने किय है। उनमें से एक है - प्रबंधकाव्य। कविवर नागार्जुन रचित "भूमिजा" यह खंडकाव्य प्रबंधकाव्य का ही एक उपभेद है। वह एक सफल खंडकाव्य है।

प्राचीन तथा आधुनिक काव्य परिवेश में बदल हो जाने के कारण भाव तथा रूप की दृष्टि से खंडकाव्य के तत्त्वो {लक्षणों} में भी बदल हो जाना स्वाभाविक है। आज सामान्यतः सफल खंडकाव्य के लिए निम्नालिखित तत्त्वों का होना आवश्यक मानते है । -

1. काव्य में जीवन के किसी मार्मिक पक्ष का चित्रण सीमित दृष्टिकोन से किया जाना चाहिए।
2. काव्य में कथा का गठन अवश्य हो तथा उसमें एकान्विति हो।
3. काव्य का कलेवर लघु हो तथा उसमें अवांतर कथाओं-घटनाओ का परित्याग हो।
4. काव्य अपने आप संपूर्ण हो तथा उसमें प्रभावान्विति हो।
5. काव्य में चरित्र-चित्रण तथा वातावरण की सफल योजना हो।
6. काव्य में सात से कम सर्ग हो तथा प्रत्येक सर्ग का पूर्वापार संबंध हो।
7. काव्य में छंदोबध्दता की आवश्यकता नहीं, मुक्त छंद में भी काव्य रचना हो सकती है।
8. काव्य का लक्ष्य काव्योद्देश्य की सिध्दी हो।

उपर्युक्त तत्वो ﴾लक्षणों﴿ के आधारपर "भूमिजा" का काव्यानुशीलन करके हम उसका प्रबंधत्व सिध्द करने का प्रयास करेंगे -

कथावस्तू :-

कविवर नागार्जुन रचित "भूमिजा" कथा का मूलाधार रामायण है। इसमें प्रमुखतः तीन प्रसंगो का चित्रण है, जो अयोध्याके राजतंत्रीय परिसर अथवा लंका विजय यात्रा के कुटनीति भरे परिवेश से सर्वथा दूर लोकभूमि में घटित होते है।

पहला प्रसंग जिसमें राम राजा की मर्यादा से बंधे हुए प्रौढ एवं तथाकथित पुरूषोत्तम राम नहीं है। वे तरूण सुलभ कौतुहल से आल्हादित, राजनीतिक दाँव-पेंच से अनभिज्ञ, रघुकुलीन अनुशासकीय सीमा से दूर वन प्रातर में महर्षि विश्वामित्र से शिक्षा ग्रहण करते हुए मुक्त विचरण करते है। उन्होंने ही महर्षि के महायज्ञ में बाधा डालने वाले राक्षसों का नाश किया।

वन में मुक्त विचरण करते समय अनायास उनका ध्यान गौतम ऋषि की ओर गया। वे ध्यानस्थ बैठे थे राम-लक्ष्मण आगे बडे तो उन्होंने देखा एक सुंदर नारी प्रतिमा पत्थर जैसी पडी है। अहल्या गौतम ऋषि के अभिशाप से अभिशप्त होकर पाषाणी बनी थी। गुरू का आदेश पाकर राम ने पाषाणी के अंग- अंग के स्पर्श किया और उसमें चेतना का संचार हुआ। इन प्रसंगों में राम का व्यक्तित्त्व पूरा का पूरा लोकधर्मी रहा है। जिसे अभी एक राजधर्म का ग्रहण तक नहीं लगा है।

दूसरा प्रसंग है जब श्रीराम लंका विजय के बाद तथा वनवास के चौदह वर्ष पूरे कर अयोध्या वापस आकर राम गद्दी पर बैठते है। राम एक आदर्श प्रजाहितदक्ष राजा बने है। जिस सीता के लिए लंका कांड के रूप में इतना बडा संग्राम हुआ उसी सीता को प्रजा वर्ग से एक धोबी द्वारा उसके चरित्र पर उंगली उठाने के

कारण पुनः वनागमन करना पडता है। इसके पूर्व भी उसे राम शिबिर में आते ही अग्नि-परीक्षा देनी पडी थी। बेचारी बेकसूर गर्भासन्न सीता वन में भटकती रही और उसे महामुनी वाल्मिकी के आश्रम मे स्नेहपूर्ण आश्रय मिलता है।

सीता रघुकुल के एकपक्षीय मर्यादा और न्याय के प्रति व्यंग्यपूर्ण नारी-सुलभ आक्रोश व्यक्त करती है। आखिर वह बार-बार अपनी पावनता, अपनी चारित्रिक शुध्दता के पक्ष में सफाई क्यों दे? राम की राजतंत्र में पोषित नीति के विपरीत सीता अपने को लोक कुल में पनपे हुए घास की तरह देखती है। यही पर उसे आत्म मर्यादा का उच्च भाव-बोध होता है। आज उसे अपने जन्म की कथा याद आती है जो जनकुपरी में उसकी धाई ने कई बार बताई थी। सीता किसी गर्भ से पैदा नहीं हुई थी। वह भूमि से जन्मी धरती की बेटी है। राजा जनक तो उसके पालनहार थे। सीता के सामने सारी विगत घटनाएँ चित्रपट के समान दिखाई दी। इसी बीच उसे अपने जुडवाँ बेटे लव-कुश की याद आती है। उसने लव-कुश को अपना भविष्य माना। सीता नये युग के परिवर्तन की कल्पना इन दोनों के द्वारा पूरा करना चाहती हैं। सीता ने इसीलिए तो वन जीवन की कठिन यातानाएँ झेली कि उसके बेटे महान पराक्रमी तथा लोकधर्मी शासक बने। दोनो बालक होशियार, वाकपटु, निपुण, युध्दकुशल, निर्भय, साहसी बनाये। मुनिवर वाल्मिकी ने उन्हे सभी शिक्षा-दीक्षा तथा राम कथा काव्य का गान सिखाया।

सीता युग परिवर्तन की कल्पना करती है। जहाँ आडंबर प्रवाद और झूठी प्रतिष्ठा न हो, सभी सच बोले, सभी को न्याय सहज सुलभ मिले, राजा अफवाहों पर विश्वास न करे, जन-जीवन में ग्लानि, न हो। नर-नारी दोनों के लिए मर्यादा, न्याय विद्या, बुध्दी, विवेक समान होंगे। शासक सही-जाँच पडताल के बाद ही किसी को दोषी समझे। घर-घर में समृध्दि प्रभुता-यौवन हो पर जन-मत को पहले ज्ञान का दिपक मिलना चाहिए। ऐसा युग परिवर्तन कब होगा? इसी विचार में वह खो जाती है।

तीसरा प्रसंग है, जब त्रिजटा ने एक बुरा सपना देखा था कि उसकी सखी बाढ में डूब गयी है। हालचाल जानने के लिए लंका से तमसा तट पर पहुँची और लव-कुश को देखकर दंग रह गयी। उसे श्रीराम की याद आए जो महर्षि विश्वामित्र के साथ जाए थे। उसने भी एक मधुर सपना देखा कि दोनों बालकों ने उस अफवाह को मिटाया है। जिससे उनकी माँ गली जा रही है। फिर लक्ष्मण क्षमा माँगने आयेंगे। राम सिर झुकाये खामोश रहेंगे। जानकी अयोध्या लौट जायेगी। जुडवाँ बेटों पर आशिर्वाद की वर्षा होगी। इनका युवराज को तरह तिलक होगा तथा मंगल उत्सव में सारा सरयू तट गूंज उठेगा। रघुकुल की यशोगाथा वीणा पर मुखरित होगी।

अंतिम दृश्य महाभयंकर हृदयद्रावक है। सीता ने देखा कि अयोध्या में अभी भी कुछ लोगों के मन में उसके चरित्र के प्रति संदेह है तो उसने अपनी माँ को पुकार "हे माता धरती। मुझे अपने में समा लें अब मुझे और बर्दाश्त नहीं होता।" सचमुच माँ धरती में दरार पडी ओर सीता उसमें लीन हो गयी। सीता के बीना सारी प्रकृति, वाल्मिकी तथा उनका आश्रम विरान-उजाड हो गया। बिचारे वाल्मिकी ठूँठ की तरह अकेले रह गये।

प्रस्तूत कथावस्तु का संगठन अर्थात आरंभ ., मध्य, अंत अत्यंत स्पष्ट है। लोकधर्मी राम के महायज्ञ रक्षक के रूप में अहल्या के उध्दारक के रूप में होता है। राम जब राजधर्मी शासक बन जाते हैं। अपनी झूठी प्रतिष्ठा प्रजाहितैषी शासक रूप में कीर्ति हासिल करने हेतु सीता को पुनः वनगमन करना पडा है। यह कथा का मध्यभाग है। अंत मे नये युग की परिवर्तन की कल्पना अपने पुत्रों के द्वारा करने का सपना। प्रत्यक्ष वापस अयोध्या में आने के बाद फिर इतिहास की पुनरावृत्ति। राम ने प्रजा से राय माँगी, तो कुछ लोगों ने चुप्पी साधी तो सीता ने धरती माँ को अपनी गोद में लेने का आवाहन किया और सचमुच धरती माँ की दरार में वह हमेशा के लिए लीन हो गयी। बेचारे वृध्द राम कथाकार

मुनिवर वाल्मिकी ठूँठ की तरह अकेले रह गये। यहीं पर कथा का अंत बडे ही हृदयद्रावक शब्दो में वर्णित हुआ हैं।

"भूमिजा" की कथावस्तु का कलेवर 44 पृष्ठों तक ही सीमित है। इसमें कवि ने अवांतर कथाओं और घटनाओं को केवल स्पर्श-संकेत करके उसे गतिशील बनाने में सहायक, रोचक बनाया है। जैसे - सीता का प्रार्दुभाव प्रसंग। नागार्जुन जी ने कथा में एकावान्विति और प्रभावान्विति की ओर विशेष ध्यान दिया है। कही भी उसमें रसभंग नहीं होता। सारी रचना मुक्त छंद में बडी कुशलतापूर्वक की है।

चरित्र - चित्रण :-

कवि नागार्जुन ने सीता को केंद्र स्थान में रखकर ही संपूर्ण "भूमिजा" काव्य की निर्मिती की है। सीता के चरित्र को उन्होंने विभिन्न रूपों में चित्रित किया है। सीता भूमिजा अर्थात धरती बेटी, आत्म-बोध एवं आत्म-मर्यादावादी, साहसी, लोकधर्मी, नये युग की आंकांक्षिणी, आदर्श माता है। कथा-विस्तार के केंद्र में वह ही प्रमुख है। सीता नारी के उद्दाम स्वाभिमान का प्रतिक है। कवि के शब्दों में राम कथा में सीता सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण पात्र है। सीता का परित्याग जहाँ नारी शोषण की व्यथा कथा है, वहीं भूमि से उत्पन्न उसी पुत्री का अपनी पवित्रता व शुचिता के प्रमाण हेतु दिव्य आवाहन कि जिसके बाद धरती फटती है और वह भू समाधी ले लेती है, उस शोषण से मुक्ति का चरम है। आगे कवि कहते है कि "जिस रघुकुल रीति-नीति और प्रीति की बात अथवा रामराज्य के आदर्श की बात होती आय। है, वह सीता के त्याग, तपस्या और साधना के समक्ष फीका है।"

सीता के बाद श्रीराम के चरित्रांकन में भी कवि को अच्छी सफलता, मिली है। प्रारंभ के प्रसंग में लोकधर्मी राम के रूप में मिलते हैं। जो गुरू की आज्ञा पाकर उन्हें महायज्ञ में सहायता करते है। गौतम ऋषि के शाप से अभिशप्त पाषाणी अहल्या का उध्दार करते है। पर यही राम राजधर्मी बनने पर अयोध्या

नगरी को आदर्श राज्य तथा अपने को आदर्श राजा साबित करने के लिए सीता से पहले अग्नि-परीक्षा लेते हैं और बाद में प्रजा-वर्ग के एक सामान्या धोबी के दारा सीता की चरित्र पर उंगली उठाने से उसे पुनःवनगमन कराते है। यहाँ राम की एकपक्षीय मर्यादा और न्याय स्पष्ट होता है। राम का शासन आडंबर, प्रवाद एवं झूठी प्रतिष्ठा की भित्ती पर खडा है। वहाँ नर-नारी के लिए मर्यादा, न्याय, विधा, बुध्दी, विवेक को कोई स्थान नहीं है। सही जाँच-पडताल न करते हुए एकपक्षीय न्याय दिया जाता है। ऐसे राम की सीता स्पष्ट शब्दों में आलोचना करते हुए रामराज्य जो राजधर्मियता को प्रधानता देते है, उनकी खिल्ली उडाते हुए नये युग के परिवर्तन की कल्पना करती है। सचमुच यहाँ राम का चरित्रांकन कवि ने गौण रूप में इसी कारण किया है।

नागार्जुनजी ने मुनिवर वाल्मिकी को एक आदर्श शिक्षक, कवि, पिता, ममता, ध्येयवादी इन्सान के रूप में चित्रित किया है। लोकापवाद सुन राम ने जब सीता को वनवास दिया था, उस समय वाल्मिकी ने ही उन्हें अपने आश्रम में रखा था। वहीं कुश और लव ने जन्म लिया और मुनि से शिक्षा-दीक्षा पायी थी। अंत में सीता के धरती माँ की गोद में समा जाने के बाद तो वे बिलकुल अकेले - ठूँठ की तरह रह गये। उनके अकेलेपन का बडा प्रभावपूर्ण चित्रण हुआ है।

इसके साथ लक्ष्मण, लव-कुश, त्रिजटा, विश्वामित्र, अहल्या आदि का प्रसंगानुसार यथार्थ चित्रण बडी कुशलता से किया है और वह अत्यंत प्रभावपूर्ण बन पडा है।

देश-काला-वातावरण-प्रकृति चित्रण :-

प्रकृति मानव की चिर-संगिनी है। माता के गर्भ से जन्म लेते ही शिशु भूमि की शरण में जाता है। प्रकृति के वायु-मंडल से साँस लेता है, और क्रमशः प्रकृति के प्रांगण में खेलता हुआ, धूल से धूसरित होता हुआ पोषण प्राप्त

करता है। अंत मेगं भी उसका शरीर पंच भूतों में मिल जाता है। अत एवं प्रकृति के प्रति अनुराग होना स्वाभाविक है। उस तरह प्रकृति और पुरूष, प्राकृतिक परिवेश ओर मानव समाज, प्राकृतिक सम्पदा और सभ्यता का विकास आदि काल से ही इनमें अन्योन्याश्रित संबंध रहा है।

कवि तो संवेदनशील प्राणी है। आदि कवि वाल्मिकी से लेकर आज तक कवियों का काव्य प्रकृति के विविध रंग और संगीत से अछूता नहीं रहा है। अतः उसके हृदय में तो प्रकृति उसके रोम-रोम में रूप-रस-रंग-गंध आकार के रूप में समा जाती है। प्रकृति उसके लिए कोई भिन्न सत्ता नहीं है। प्रकृति तो उसके आराध्य की अनुचरी है। फिर कविवर नागार्जुन उसका अपवाद कैसे होंगे?

आलोच्य प्रबंध "भूमिजा" में तीन प्रसंग है - तीनों प्राकृतिक परिवेश में रसे-बसे है। यहाँ प्रकृति नगर की कृत्रिम सभ्यता औपचारिकता से दूर उन्मुक्त वन प्रांतर में नदी, पहाड, पेड-पौधे, पशु-पक्षी, कील-भील, मुनि-कुमार, बन-बालाओं के बीच हो पल्लवित-पुषित एवं फलित होती है। यहाँ प्रकृति को कवि ने एक अनोखी चित्र के रूप में प्रस्तुत किया है। कवि ने प्रकृति के विभिन्न रूप दिखाये है। जैसे -

1· **आलंबन रूप में :-**

जहाँ प्रकृति का चित्रण स्वतंत्र रूप में किया जाता है, वहाँ उसका आलंबन रूप होता है। कवि प्रकृति का निरीक्षण करता है और उसके सूक्ष्म तत्त्वों के प्रति आकर्षित होता है। अपने इस आकर्षण को वह अपनी रचना में यथावत अभिव्यक्ति दे देता है। यहाँ प्रकृति उसका साधन न होकर साध्य होती है। "भूमिजा" में आलंबन रूप के कई चित्र मिलते है। उदा· राम कोसल जनपद के प्राकृतिक परिवेश की और संकेत इसप्रकार करते है -

"सुजल सुफल बहुविध धनधान्य समेत
लता-गुल्म-तृण-तरू-वल्ली परिव्याप्त।" [44]

यहाँ प्रकृति अपने बेटों के लिए आँचल में भरे धन-धान्य लुटाती हुई माता-सी प्रतीत हो रही हैं।

2. **उद्दीपन रूप में :-**

प्रकृति नायक तथा नायिकाओं के हृदयगत भावों को उद्दीप्त करती हुई जान पडती है। नायक तथा नायिका की जैसी मानसिक दशा होती है, प्रकृति उसकी उस मानसिक दशा में तीव्रता लाती जान पडती है।

"शिशिर निशा के हिमाच्छन शशितुल्य
माताओं के मुँह आते हैं याद।" [45]

राम तथा लक्ष्मण को माताओं के दुःख से कुम्हलाये मुँह याद आते है। ठीक उसी तरह जैसे शिशिर की रात्रि में चाँद को अकस्मात पाला-कुहासे ने घेर लिया हो।

मुनिवर वाल्मिको सीता को धरती में समा जाने के बाद चिंतन प्रवाह में ठगे से खडे रहते है। रात बीत जाती है।इस समय की प्रकृति का चित्रण वसंत और शशि के माध्यम से इस प्रकार किया है -

"रात्रि शेष के वासंतिक संकेत,
निष्प्रभ शशि ने मान लिए चुपचाप।" [46]

3. **पृष्ठ भूमि के रूप में :-**

जहाँ प्रकृति का वर्णन आगे आनेवाली घटनांओ के लिए पृष्ठभूमि प्रस्तुत करता है वहाँ इस प्रकार का प्रकृति चित्रण होता है। जैसे लक्ष्मण राम को बताते है -

"नहीं मिलेगी ऐसी उर्वर भूमि
नहीं मिलेगा ऐसा सुंदर देश
कही चराचर किंवा त्रिभुवन मध्य
ऐसी मिट्टी नही मिलेगी तात।"[47]

4. **उपमान के रूप में :-**

उपमान रूप में प्रकृति चित्रण की परंपरा बडी प्राचीन है। कवि ने प्रकृति में सदैव एक विलक्षण सौंदर्य देखा है। यही कारण है कि मानव के सौंदर्य को अभिव्यक्त करने के लिए उसने विभिन्न प्राकृतिक उपादनों का चयन किया है। जैसे त्रिजटा लव-कुश को देखकर भ्रम में पड जाती है कि ये है कौन? इस उम्र मे मुनि विश्वामित्र के साथ राम भी तो ऐसे ही दीखते होंगे -

"कानो में लटके लघु-लघु रूद्राक्ष
सिर पर शोभित जटाजूट कनकाभ
कटि में शोषित कृष्णाजिन चित्रांक
पग-युग में लकडी के नव पदत्राण
नलिन विलोचन, विधुमुख आयतकर्णा
शंखग्रीव, पृथुवक्ष, सुनाभि, सुबाहु...
क्या होगा इस मुनिकुमार का नाम
लगी सोचने त्रिजटा बारंबार।"[48]

5. **मानवीकरण के रूप में :-**

कवि द्वारा मानव चेतना का प्रकृति पर आरोप प्रकृति को मानवीकरण कहा जाता है। "भूमिजा" में ऐसे मानवीकरण के कई स्थल है। देखिए -

"लगता है मुख राहु ग्रस्त शशि तुल्य
क्लेशांकित वे बुझे-बुझे से नेत्र

तुहिन दग्ध कवलय होते है, ओह।

कौन सकेगा उन आँखों को देख

कुम्हलाया मुख फीके निष्प्रभव गाल। -[49]

6· **उपादान रूप में :-**

जहाँ कवि भावसाम्य के आधार पर प्रकृति से उपादान चुन लेता है, वहाँ प्रकृति का प्रतिकात्मक चित्रण माना जाता है। जैसे राम अहल्या को समझाते है -

नहीं हुई थी, अम्ब, आप पाषाण

नहीं हुई थी, आप निष्प्राण

नहीं नहीं अन्तः सलिला मरुभूमि

सदृश आप भी रही चेतनापूर्ण।"[50]

7· **बिंब-प्रतिबिंब रूप में :-**

जहाँ मानव के क्रिया-कलापों और प्रकृति के व्यापारों में समता दिखायी पडती है। वहाँ प्रकृति का वर्णन बिंब-प्रतिबिंब रूप में किया जाता है। उदा· अहल्या का कथन -

सत्य सत्य कहती हूँ, परमोदार।

साक्षी पृथ्वी - साक्षी है आकाश

हुई नहीं स्मपृक्त किसी के साथ

कभी अहल्या अपने पति को छोड।"[51]

यहाँ अहल्या अपने सत्य कथन के लिए पृथ्वी-आकाश की साक्ष देती है।

8· **उपदेश रूप में :-**

कभी - कभी कवि को प्रकृति उपदेश करती सी जान पडती है। जब कवि उसका इस रूप में चित्रण करता है, सभो वह प्रकृति का उपदेश का,

रूप में चित्रण कहलाता है। उदा· सीता नये युग परिवर्तन की आकांक्षा करते हुए कहती है -

"झूठ गलेगी जब कि मोम की भाँति
सहज सुलभ होगा अब सब को न्याय
स्वेच्छा संगत होंगे जन समुदाय
झूठ मूठ को ग्लानि, असत्य, प्रवाद,
नहीं रहेंगे जन-जीवन में शेष।"[52]

9· **रहस्यवादी रूप में :-**

रहस्यवादी प्रकृति में सर्वत्र विश्व की नियामक परम सत्ता का अभास पाता है। उसे प्रकृति के कण-कण में परमात्मा का रूप दिखाई पडता है -

"धन्वन्तरि, का पर-पल्लव-संस्पर्श
सुनती हूँ, करता अमरत्न-प्रदान।
घनश्याम, बतलाओ, तुम हो कोन?
पाषाणी में डाल दिये है प्राण?"[53]

10· **दार्शनिक रूप में :-**

जहाँ प्रकृति दर्शन के रूप में उपस्थित होती है। उसे दार्शनिक रूप कहते है। भारतीय दर्शन की परंपरा बहुत प्राचीन है। नागार्जुनजो ने इसी दर्शन से प्रेरणा लेकर, "भूमिजा" की नींव डाली है। सीता अर्थात भूमिजा प्रकृति की ऐसी देवी है, जो प्रकृति की कोख से उत्पन्न होती है, प्रकृति की गोद में विकसित होती है। और अंत में प्रकृति में ही समाहित हो जाती है। इस प्रकार काव्य का अंत इस तरह होता है, जैसे कवि की लेखनी का प्रवाह प्रकृति की अनंत में एकाकार हो गया हो। जहाँ प्रकृति की व्यापकता के अलावा और कुछ भी शेष न रहा हो, जैसे -

"ऋतुओं का स्थापित होगा फिर राज्य
कहीं नही दिखेंगे पर्ण कुटीर
सूझा, समान्वित श्रम का कोई चिन्ह
शेष न होगा। होगा प्राकृत दृश्य।" [54]

इस प्रकार कविवर नागार्जुनजी का प्राकृति वर्णन अत्यंत सरस, सजीव एवं प्रभावोत्पादक बना है। "भूमिजा" के आरंभिक चरण से लेकर अंतिम चरण तक प्रकृति ही परिलाक्षित होती है। अतः वे सच्चे प्रकृति प्रेमी नजर आते है। इसीलिए तो उन्होंने प्रकृति के प्रत्येक अंग पर सूक्ष्म दृष्टि फेरी तथा उसका उन्होंने सुंदर चित्रण भी किया। फिर भी उनकी भक्ति भावना तथा उनका प्रतिपाद्य "भूमिजा" अर्थात सीता को न्याय दिलाता रहा है। उन्होंने प्रकृति को भी सीता-राम भाक्ति के रूप में देखा। अतः प्रकृति चित्रण में कविवर नागार्जुन को अद्‌भुत सफलता मिली है।

"भूमिजा" का उद्देश्य का प्रतिपाद्य :-

कविवर नागार्जुन का लोकप्रिय एवं सफल खंडकाव्य भूमिजा इसमें उन्होंने "रामायण" के कुछ महत्त्वपूर्ण प्रसंगो को ही उठाया है। ये प्रसंग राम के राजतंत्रीय परिसर अथवा लंका विजय यात्रा के कूटनीति भरे परिवेश से सर्वथा दूर लोकभुमि में घटित होते है। नागार्जुनजी ने एक नये आधुनिक बोध को सामने रखकर इस खंडकाव्य का निर्माण किया है। भूमिजा का प्रमुख प्रतिपाद्य है - झूठी मर्यादा को तोडना और राजधर्म को लोकधर्म में बदलना। इसी उद्देश्य की पूर्ती के लिए सीता अपने जुडवाँ बच्चों को शिक्षा-दीक्षा देकर उन्हें संस्कारक्षम बनाती है। साथ ही जिस रघुकुल की रीति-नीति और प्रीति की बात अथवा रामराज्य के आदर्श की बात होती आयी है, वह सीता के त्याग, तपस्या एवं साधना के समक्ष फीका है।

सीता द्वारा नये युग की संकल्पना कवि की खास आधुनिक बोधपरक है। एक ऐसा युगपरिर्वतन आएगा जब आडंबर, प्रवाद और झूठी प्रतिष्ठा को

कहीं जगह नहीं मिलेगी। जब सभी सच बोलेंगे, झूठ मोम की तरह बल जायेगा। सभी को न्याय सुलभ मिलेगा। हर कोई स्वतः अनुशासनबध्द रहेगा। राजा अफवाहों पर ध्यान न देंगे। जनजीवन में ग्लानि नहीं होगी। नर-नारी के लिए मर्यादा, न्याय-विद्या, बुध्दि विवेक समान होंगे। घर - घर में खुशहाली समृध्दि फैलेगी।

नागार्जुनजी ने "भूमिजा" में पौराणिक ऐतिहासिक कथानक को प्रस्तुत करते हुए हमें आधुनिक बोध कराते हैं कि आदर्श राजा या शासक वही है, जो समता, निःपक्ष हो तथा अफवाहों पर विश्वास न करें। झूठी प्रतिष्ठा, नाम-यश कीर्ति पाकर इतिहास में यादगार बनने के लिए बेकसूर को सजा देना राम जैसे शासक को भी शोभा नहीं देता। आदर्श राजा या शासक का यह कर्तव्य है कि पहले सही जाँच पडताल करें और यदि उनका दोष सिध्द हुआ तो फिर उसे सजा दी जाय। राम ने सीता के बारे में ऐसा नहीं किया। उन्होंने एक पक्षीय न्याय देकर सीता का अपमान किया। स्त्री चरित्र का अपमान किया, उसके एक पत्नीव्रत का अपमान किया है। सीता नारी के उद्दाम स्वाभिमान की प्रतिक है।

नागार्जुन ने बताया है कि सीता का परित्याग, नारी शोषण की व्यथा है। भूमि से उत्पन्न उस पुत्री का अपनी पवित्रता और शुचिता के प्रमाण हेतु दिव्य आवाहन करना उसके बाद धरती फटती है और वह भू-समाधि ले लेती है। यह शोषण से मुक्ति का चरम है। वर्तमान में कोई भी पति अपनी पत्नी के चरित्र पर ऐसा बिना सोचे विचार जाँच पडताल किये बिना दोषी ठहरायेगा। तो वह नारी अपने स्वाभिमान की, आत्मगौरव की रक्षा करने के लिए सीता का रूप लेकर उस शोषण से मुक्ति पायेगी। यही महत् उद्देश्य नागार्जुन ने "भूमिजा" में प्रस्तुत किया है। उपयुक्त उद्देश्यों को देखने के बाद हम निःसंदेह कह सकते है कि नागार्जुन को अपने उद्देश्य में पर्याप्त सफलता मिली है।

संक्षेप में "भूमिजा" एक सफल प्रबंधकाव्य एवं खंडकाव्य है। अपने उदात्त उद्देश्य, सार्थक चरित्रांकन एवं सफल देश - काल - वातावरण तथा प्रकृति चित्रण के कला सौंदर्य के सभी पक्षों में प्रस्तुत काव्य कृति, हिंदी खंडकाव्य की धारा में विशिष्ट स्थान की अधिकारिणी है। खंडकाव्य के सभी तत्वों को पूर्ण करने की ताकद इसमें है। अतः कहा जा सकता है कि नागार्जुन की "भूमिजा" एक सफल खंडकाव्य है।

संदर्भ सूची

1·	साहित्यलोचन	-	डॉ·श्यामसुंदरदास पृ·113
2·	काव्य के रूप	-	बाबू गुलाबराय पृ·24
3·	वाड्मय विमर्श	-	आ·विश्वनाथप्रसाद मिश्र पृ·सं·14
4·	हिन्दी काव्यशास्त्र का इतिहास-		डा·भगीरथ मिश्र पृ·सं·419
5·	काव्यशास्त्र	-	डॉ·भगीरथ मिश्र पृ·सं·49-50
6·	जायसी ग्रंथावली	-	आ·रामचंद्र शुक्ल पृ·सं·66, 67
7·	प्रबंधेण कविद्रांणा कीर्ति कि पुनः। वक्रोन्ति जीवितम्	-	कुंतक 4/26
8·	एन इन्ट्रोडक्शन टु दि स्टडी ऑफ लिटरेचर	-	हडसन अ·3
9·	हिन्दी साहित्यकोश	-	सं·डा·धीरेंद्र वर्मा पृ·478-479
10·	अग्निपुराण	-	काव्यादि लक्षणं अध्याय 337
11·	काव्यादर्श	-	प्रथम परिच्छेद 14-19 छंद
12·	काव्यादर्श	-	तर्कवागीश भट्टाचार्य श्री प्रेमचंद्र की टीका - पृ·सं·27

13·	काव्यानुशासन -	आ·हेमचंद्र अध्याय 8 - सू6
14·	काव्यलंकार और काव्यदर्श -	1:19/21 1:13:14
15·	काव्यालंकर -	8:5:6
16·	काव्यालंकार -	रूद्रट - 16/6
17·	काव्यशास्त्र -	डा·भगीरथ मिश्र पृ·सं·67
18·	साहित्यदर्पण -	विश्वनाथ 6/328/329
19·	वाड्मय विमर्श -	द्वितीय संस्करण पृ·सं·39
20·	काव्य के रूप -	बाबू गुलाबराय पृ·सं·23
21·	हिन्दी काव्यशास्त्र का इतिहास -	डॉ·भगीरथ मिश्र पृ·421
22·	काव्यशास्त्र -	डॉ·भगीरथ मिश्र पृ·सं·67
23·	हिंदी काव्यशैलियों का विकास -	डॉ·हरदेव बाहरी पृ·सं·5
24·	साहित्यशास्त्र का पारिभाषिक शब्दकोश -	राजेंद्र द्विवेदी पृ·सं·80
25·	काव्यरूपों का मूल स्त्रोत उनका विकास -	डॉ·शकुंतला दूबे पृ·143, 147
26·	हिन्दी साहित्यकोश -	सं·डॉ·धीरेंद्र वर्मा पृ·248

27·	हिन्दी साहित्यपर संस्कृत साहित्य का इतिहास	-	डा·सरनामसिंह शर्मा पृ·28
28·	संस्कृत आलोचना	-	डा·बलदेव उपाध्याय दि·सं·पृ·62
29·	हिंदी साहित्यकोश	-	सं·डा·वीरेंद्र वर्मा पृ·248
30·	हिन्दी साहित्य का बहद् इतिहास ४प्रथम भाग४	-	सं·राजग्ली पांडेय पृ·सं·219
31·	हिंदी काव्यशास्त्र का इतिहास	-	डा·भगीरथ मिश्र पृ·421
32·	ते लघवो विज्ञेया येण्वन्यतमो भवेष्युतवर्गात - काव्यलंकार	-	रूद्रट 16/6
33·	काव्यशास्त्र	-	डा·भगीरथ मिश्र पृ·61
34·	वाड्मयविमर्श	-	पं·विश्वनाथप्रसाद मिश्र पृ·सं·31
35·	काव्यालंकार	-	भामह, 1/20
36·	साहित्यदर्पण	-	विश्नाथ 6/320
37·	साहित्यदर्पण	-	विश्वनाथ
38·	साहित्यदर्पण	-	विश्नाथ, 6/321
39·	हिन्दी साहित्य कोश	-	सं·डा·धीरेंद्र वर्मा पृ·सं·287
40·	वही	-	पृ·287
41·	पंद्रहवी शताब्दी से सतहवी शताब्दी तक हिन्दी साहित्य के काव्य रूपों का अध्ययन ४शोध प्रबंध४	-	राम बाबू शर्मा पृ·214

42·	हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास	-	डा·रामकुमार वर्मा पृ·सं·475
43·	हिन्दी साहित्यकोश	-	स·डा·धीरेंद्र वर्मा पृ·248
44·	भूमिजा	-	नागार्जुन पृ·36
45·	वही	-	पृ·38
46·	वही	-	पृ·75
47·	वही	-	पृ·37
48·	वही	-	पृ·73
49·	वही	-	पृ·72
50·	वही	-	पृ·50
51·	वही	-	पृ·53
52·	वही	-	पृ·69
53·	वही	-	पृ·51
54·	वही	-	पृ·77